मृतात्माओं की खोज...

(मृत्यु के बाद का जीवन)

पूर्व श्रृंखला (तीन) में हमने मृतात्माओं के पुर्नजन्म को लेकर उसकी विविधताओं की चर्चा की है। इस क्रमिक क्रम को आगे बढ़ाने से पूर्व हमें षोडश संस्कारों (गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्त, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चौल, उपनयन 'मौज्जी', व्रत '4', गोदान, समावर्तन, विवाह और अन्त्येष्टि आदि) के उन बिन्दुओं पर पुनः विचार कर लेना चाहिए जिनकी अपूर्णता या अपूर्ण समायोजन आदि से ' मृत्यु के बाद का जीवन' विशेष प्रभावित ही नही बल्कि असंतुलित भी 'स्रष्टि और विनाश' के क्रम में हो सकता है।

'षोडश संस्कार' का आरम्भिक बिन्दु 'गर्भाधान' और अन्तिम बिन्दु 'अन्त्येष्टि' 'मृतात्मा' के चक्रीय गतिशील क्रम को विशेष प्रभावित कर सकता है। षोडश संस्कारों का प्रथम और अन्तिम संस्कार ('गर्भाधान' और 'अन्तयेष्टि') तो मृतात्मा के गतिशील 'पुर्नजन्म' को प्रभावित करता है लेकिन इसके अतिरिक्त के षोडश संस्कार (पुंसवन, सीमन्त, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चौल, उपनयन 'मौज्जी', व्रत '4', गोदान, समावर्तन, विवाह आदि) व्यक्ति/ मानव के भौतिक जीवन को भी किसी न किसी रूप में प्रभावित करते रहते हैं।

यहां पर मैं किसी मानव/व्यक्ति के 'मृत्यु के बाद का जीवन' को लेकर षोडश संस्कारों का प्रथम और अन्तिम संस्कार ('गर्भाधान' और 'अन्तयेष्टि') पर आध्यात्मिक दृष्टि से विचार करना आवश्यक समझता हूं। मृतात्माओं के सापेक्ष में इन दोनों संस्कारों ('गर्भाधान' और 'अन्तयेष्टि') के विविध प्रभावों का क्रम निम्न हो सकता है –

1.मृतात्माओं का पुर्नजन्म – किसी भी मृतात्मा का सूक्ष्म (आत्मा) जब विविध मार्गों (दक्षिणायन, उत्तरायण या चन्द्रायण आदि) से लगभग तेरह योजन की दूरी 'आवश्यक कर्मकाण्ड' के क्रम में पार या तय कर लेता है तो उसे 'पुर्नजन्म' की विविध प्रक्रियाओं से जुड़ने के लिए विविध लोकों के माध्यम से कम से कम एक लाख चौरासी हजार योनियों में भ्रमण करना पड़ता है। मृतात्मा की इस अनवरत यात्रा में सूक्ष्मतम् योनियों की संख्या एक लाख चौरासी हजार से लेकर चौरासी लाख तक हो सकती है।

मृतात्मा के सूक्ष्म को अपनी पारलौकिक यात्रा को पूर्ण करने के उपरान्त किसी स्थूल से जुड़ने के लिए किसी माता (स्त्री) के गर्भ में प्रवेश करना पड़ता है। यह सब प्रथम संस्कार 'गर्भाधान' के अर्न्तगत ही सम्भव है। यदि 'गर्भाधान' का क्रम संस्कारित और ऋतसम्मत और अनुकूल ग्रह/नक्षत्रों के सापेक्ष में होता है तो वह जीव अपने भौतिक जीवन में सभी षोडश संस्कारों को यथासम्भव पूर्ण करते हुए दीर्घायु (शतकीय जीवन) होने का प्रयास करता है। यह शतप्रतिशत सत्य है कि यदि कोई मृतात्मा या उसका सूक्ष्म किसी अनुकूल स्थूल से संयोजन करते हुए किसी गर्भिणी के गर्भ से शिशु के रूप में जन्म लेने के उपरान्त मानव जीवन प्राप्त करता है तो शतकीय क्रम के अन्तर्गत उसके 'सूक्ष्म और स्थूल' का विखंडन यानी मृत्यु निश्चित है।

किसी मानव के मृत्यु के उपरान्त, यदि उसके तथाकथित स्थूल की 'अन्त्येष्टि' सम्बन्धी संस्कार कर्मकाण्डीय क्रम में सम्पन्न नहीं होता है तो उससे सम्बन्धित 'मृतात्मा' अपनी आगामिक सूक्ष्म यात्रा को पूर्ण करते हुए 'पुनर्जन्म' की प्रक्रिया से सामान्यक्रम में जुड़ जाय – यह आवश्यक नहीं है। 'अन्त्येष्टि' सम्बन्धी संस्कार के विस्तृत क्रम को निम्न क्रम में जाना – समझा जा सकता है –

2.'अन्त्येष्टि' सम्बन्धी संस्कार – .'अन्त्येष्टि' एक संस्कार है। 'जन्म संस्कार' और 'मृतक संस्कार' – प्रत्येक मानव के लिए ऋण स्वरूप है। जो स्त्री, बच्चा या परिव्राजक है, जो दूर देश में मरता है, जो अकाल मृत्यु पाता है

या आत्महत्या करता है या किसी दुर्घटना के अन्तर्गत मर जाता है; उसके लिए अन्त्येष्टि कृत्य भिन्न – भिन्न प्रकार के होते हैं। निर्णय सिन्धु (पृ0 569) के अनुसार .'अन्त्येष्टि' प्रत्येक शाखा में भिन्न रूप से उल्लिखित है, किन्तु कतिपय बातें सभी शाखा में एक सी हैं।

'आश्वलायनगृह्यसूत्र' (4/1 और 2) ने आहिताग्नि की मृत्यु से सम्बन्धित सामान्य कृत्यों का वर्णन किया है। 'आश्वलायनगृह्यसूत्र' ने उस आहिताग्नि की .'अन्त्येष्टि' का वर्णन किया है जो सोमयज्ञ या अन्य यज्ञों में लगे रहते मर जाते हैं।

'शतपथ ब्राह्मण'(13/8/4/11) और 'पारस्कर गृह्यसूत्र' (3/10/10) ने स्पष्ट लिखा है कि जिसका उपनयन संस्कार हो चुका है उसकी .'अन्त्येष्टि' क्रिया उसी प्रकार की जाती है जिस प्रकार श्रौत अग्निहोत्र करने वाले व्यक्ति का किया जाता है। अन्तर मात्र इतना होता है कि आहिताग्नि तीनो वैदिक अग्नियो के साथ जला दिया जाता है, जिसके पास केवल स्मार्तअग्नि या औपासन अग्नि होती है, वह उसके साथ जला दिया जाता है और सामान्य लोगों का शव केवल साधारण अग्नि से जलाया जाता है।

(विशेष – 'देवल' का कथन है कि साधारण अग्नि के प्रयोग में 'चाण्डाल की अग्नि' या अशुद्ध अग्नि या सूतक गृह अग्नि या पतित के घर की अग्नि का व्यवहार नहीं करना चाहिए।)

वर्तमान (आधुनिककाल) में .'अन्त्येष्टि' क्रिया की विधि सामान्यतः 'आश्वलायनगृह्यसूत्र' के नियमों के अनुसार या गरुणपुराण (2/4/41) में वर्णित व्यवस्था पर आधारित हैं। विभिन्न स्थानों में विभिन्न विधियां परम्परा से प्रयुक्त होती है। एक स्थान की विधि दूसरे स्थान से भिन्न होती हैं। इस प्रकार की विभिन्न्ता में मूल शाखाएं आदि हैं। इसके कतिपय अंशों को संक्षेप में निम्नक्रम में समक्षा जा सकता है–

ब्रह्मचारी को किसी व्यक्ति या अपनी ही जाति के किसी व्यक्ति के शव को ढोने की आज्ञा नही थी, किन्तु वह अपने माता – पिता, गुरु, आचार्य और उपाध्याय के शव को ढो सकता था और ऐसा करने पर उसे कोई कल्मष (दोष) नहीं लगता था। (वसिष्ठ – 23/7, मनु – 5/91, याज्ञ0 – 3/15, लघुहारित – पृ0 92–93, ब्रह्मपुराण 'पराशरमाधवीय' – 1/2,पृ0 – 278) ।

यदि कोई ब्रह्मचारी उपरोक्त पांचों व्यक्तियों (माता – पिता, गुरु, आचार्य और उपाध्याय) के शव के अतिरिक्त अन्य किसी व्यक्ति के शव को ढोता था तो उसका ब्रह्मचर्य व्रत खण्डित माना जाता था।

(विशेष – उपरोक्त परम्परा एक रूढवादी परम्परा है। किसी भी शवयात्रा में शव को ढोने या उसको सहयोग देने से किसी का धर्म या ब्रह्मचर्य खण्डित नहीं होता है। लेकिन उस व्यक्ति को शव ढोने या उससे सम्बन्धित कृत्य से सीधे सीधे नहीं जुड़ना चाहिए जो 'ब्रह्मविद्या' या 'सूक्ष्म – स्थूल' की विविध गतिविधियों में लिप्त या कार्यरत् हो।)

मनु (5/103 और याज्ञ0 3/13–14) के अनुसार – जो लोग स्वजातीय व्यक्ति का शव ढोते हैं उन्हें वस्त्र सहित स्नान करना चाहिए। उन्हें नीम की पत्तियां चबानी चाहिए, अग्नि, जल, गोबर और सरसों आदि का स्पर्श करना चाहिए; धीरे से किसी पत्थर पर पैर रखना चाहिए और तब घर में प्रवेश करना चाहिए (गौ 0 14/29, याज्ञ0 3/26, मनु0 4/103, परा0 3/42देवल, परा0 मा0 1/2, पृ0 277और हारीत, अपरार्क पृ0 871)।

पराशर (3/3/41) के अनुसार – जो व्यक्ति सपिण्ड रहित ब्राह्मण का शव ढोता है वह प्रत्येक पग पर एक – एक यज्ञ के सम्पादन का फल पाता है और केवल पानी में डुबकी लेने और प्राणायाम करने से ही पवित्र हो जाता है। मनु0 (5/101 – 102) का कथन है कि – जो व्यक्ति किसी सपिण्ड रहित व्यक्ति का शव ढोता है वह तीन दिनों के उपरान्त ही अशौचरहित हो जाता है।

(विशेष – उपरोक्त क्रम या अन्य क्रम में मृत व्यक्ति के शव को ढोने वाला व्यक्ति पुण्य का भागी अवश्य होता है लेकिन इस क्रम से उसके पूर्व पातकीय असाधु कृत्यों का कुप्रभाव नष्ट नहीं होता है। वह सब समुचित प्रायश्चित या 'जन्म – जन्मान्तर' के भोग के उपरान्त ही नष्ट होता है।)

शव को जलाने के उपरान्त, 'अन्त्येष्टि क्रिया' के अंग के रूप में कर्ता को मुण्डन करवाना पड़ता है और उसके उपरान्त स्नान करना होता है।

(विशेष – मुण्डन (वपन) का क्रम निम्न हो सकता है – गंगा तट पर, भास्कर क्षेत्र में, माता – पिता और गुरु की मृत्यु पर श्रौताग्नियों की स्थापना पर और सोम यज्ञ आदि में।)

अन्त्यकर्मदीपक (पृ0 19) के अनुसार – 'अन्त्येष्टि क्रिया' करने वाले पुत्र या अन्य कर्ता को सबसे पहले मुण्डन कराके स्नान करना चाहिए और तब शव को किसी पवित्र स्थान पर ले जाना चाहिए, या यदि ऐसा स्थान वहां न हो तो शव को स्नान कराने वाले जल में 'गंगा, गया, या अन्य तीर्थों का आवाहन करना चाहिए, इसके उपरान्त शव पर घी या तिल के तेल का लेप करके पुनः उसे नहलाना चाहिए, नया वस्त्र पहनाना चाहिए, यज्ञोपवीत, गोपी चन्दन, तुलसी की माला से सजाना चाहिए और सम्पूर्ण शरीर में चन्दन , कपूर कुंकुम, कस्तूरी आदि सुगंधित पदार्थों का प्रयोग करना चाहिए। यदि 'अन्त्येष्टि क्रिया' रात्रि में हो तो रात्रि में मुण्डन नहीं होना चाहिए, बल्कि दूसरे दिन होना चाहिए।

(विशेष –1: आपस्तम्बधर्मसूत्र (1/3/10/6) के मत से मृत व्यक्ति से छोटे सभी सपिण्ड लोगों को 'मुण्डन' कराना चाहिए।

विशेष –2: मदनपारिजात का कथन है कि ''अन्त्येष्टि कर्ता' को वपन – कर्म प्रथम दिन तथा अशौच की समाप्ति पर कराना चाहिए, किन्तु शुद्धिप्रकाश (पृ0 162) ने 'मिताक्षरा (याज्ञ0 3/17) के मत का समर्थन

करते हुए कहा है कि ' वपन – कर्म' का दिन स्थान विशेष की परम्परा पर निर्भर है।

विशेष –3: वाराणसी सम्प्रदाय मत से ''अन्त्येष्टि कर्ता' 'अन्त्येष्टि कर्म' के समय 'वपन' कराता है, किन्तु मिथिला सम्प्रदाय के मत से 'अन्त्येष्टि कर्म' के समय 'वपन' नहीं होता है।

विशेष –4: गरुणपुराण (2/4/67–69) के मत से घोर रुदन शवदाह के समय किया जाना चाहिए, किन्तु दाह कर्म और जल तर्पण के उपरान्त रुदन कार्य नहीं होना चाहिए।)

आश्व0 गृह0 ने केवल एक बार जल तर्पण की बात कही है, किन्तु 'सत्या –षाढश्रौ0 (28/2/72) आदि ने व्यवस्था दी है कि तिलमिश्रित जल अंजलि द्वारा मृत्यु के दिन मृतक का नाम और गोत्र बोलकर तीन बार दिया जाता है और ऐसा ही प्रतिदिन ग्यारहवें दिन तक किया जाता है।

गौतमधर्मसूत्र (14/38) और वशिष्ठ0 (4/12) ने व्यवस्था दी है कि – जलदान सपिण्डों द्वारा प्रथम, तीसरे, सातवें और नवें दिन दक्षिणाभिमुख होकर दिया जाता है किन्तु 'हरदत्त' का कथन है कि कुल मिलाकर 75 अंजलियां देनी चाहिए (प्रथम दिन –3, तीसरे दिन –9, सातवें दिन – 30 और नवें दिन – 33)।

विष्णुधर्मसूत्र (19/7 एवं 13), प्रचेता और पैठीनसि (अपरार्क पृ0 874) आदि ने यह व्यवस्था दी है कि मृतात्मा को तिलमिश्रित जल और पिण्ड दस दिनों तक देते रहना चाहिए।

गरुणपुराण (प्रेतखण्ड, 5/22 –23) ने भी 10, 55 या 100 अंजलियों को देने की बात कही है।

(विशेष – तिलमिश्रित अंजलि और पिण्ड देने की उपरोक्त परम्परा सामान्य मृत व्यक्ति के मृतात्मा की आगामिक यात्रा के लिए दिया जा सकता है। लेकिन जिन व्यक्तियों की मृत्यु असामयिक, किसी महाव्यधि या व्यापक

नरसंहार और कतिपय अशुद्धावस्था में हुई है, उसमें मृतात्माओं के आगामिक यात्रा के लिए तिलमिश्रित अंजलि और पिण्ड देने की संख्या सामान्य से कई गुना (3 से 7) अतिरिक्त अज्ञातक्रम में कर देनी चाहिए। ऐसा न करने पर वह अतृप्त मृतात्माएं लम्बे समय तक प्रेतयोनि में रहते हुए लोगों को विविधकम में प्रभावित कर सकती है।

अतिरिक्त तिलमिश्रित अंजलि और पिण्ड देने का क्रम किसी सक्षम और योग्य आध्यात्मिक साधक की सलाह पर उचित मंत्रों और साधनों के साथ सम्पन्न होना चाहिए। यह कार्य मृतक के घरवालों की असमर्थता पर पुरोहित, ग्रामप्रधान या कोई भी सक्षम व्यक्ति कर सकता है।)

यदि आहिताग्नि (वह व्यक्ति जो श्रौत अग्निहोत्र करता हो) की मृत्यु विदेश में हो जाय तो उसकी अस्थियां मंगाकर काले मृगचर्म पर फैला दी जानी चाहिए (शतपथब्राह्मण – 2/5/1/13–14) और उन्हें मानव आकार में सजा देना चाहिए तथा रूई, घृत, श्रौत अग्नियों एवं यज्ञ पात्रों के साथ जला डालना चाहिए।

यदि आहिताग्नि (वह व्यक्ति जो श्रौत अग्निहोत्र करता हो) की मृत्यु विदेश में हो जाय और उसकी अस्थियां न प्राप्त हो सके तो 'ऐतरेयब्राह्मण' (32/1) एवं प्राचीन ग्रंथों के आधार पर निम्न व्यवस्था दी गयी है –

'पलाश की 360 पत्तियों से काले मृगचर्म पर मानव पुत्तल बनाना चाहिए और उसे ऊन के सूतों से बांध देना चाहिए, उस पर जौ का आटा डाल देना चाहिए और घृत डालकर मृत को अग्नियों एवं यज्ञपात्रों के साथ जला डालना चाहिए।

सत्वाषाढश्रौत (29/4/41), बौधा0 पितृमेषसूत्र (3/7/4) और गरुडपुराण (2/4/169–70) में ऐसी व्यवस्था दी हुई है कि यदि विदेश गया हुआ व्यक्ति आकृति दहन के उपरान्त लौट आये, तो वह घृत के कुण्ड में डुबोकर बाहर निकाला जाता है, पुनः उसको स्नान कराया जाता है और जातकर्म से लेकर सभी संस्कार किए जाते हैं। इसके उपरान्त

उसको अपनी पत्नी से पुनः विवाह करना होता है। पत्नी की अनुपस्थिति में वह दूसरी कन्या से विवाह कर सकता है। इसके उपरान्त वह पुनः अग्निहोत्र आरम्भ कर सकता है।

मनु (5/68), याज्ञ0(3/1), पराशर (3/14), विष्णु0(22/27–28) और ब्रह्मपुराण (परा0 मा0 1/2, पृ0 238) के मत से गर्भ से पतित बच्चे, भ्रूण, मृतोत्पन्न शिशु दन्तहीन शिशु को मृत्यु के उपरान्त वस्त्र से ढंक कर गाड़ देना चाहिए। कतिपय सूत्रों ने ऐसी व्यवस्था दी है कि यदि आहिताग्नि की पत्नी उससे पूर्व मर जाये तो वह चाहे तो उसे श्रौताग्नियों द्वारा जला सकता है। मनु (5/167–168) का कथन है कि यदि आहिताग्नि द्विज की सवर्ण और सदाचारिणी पत्नी मर जाये तो आहिताग्नि पति अपनी श्रौत एवं स्मार्त अग्नियों से उसे यज्ञपात्रों के साथ जला सकता है। इसके उपरान्त वह पुनः विवाह करके अग्निहोत्र आरम्भ कर सकता है।

(विशेष – मानव योनि में मृत्यु – 'चाहे नवजात शिशु की हो या अशुद्व अवस्था में उसकी मां की' – दोनो परिस्थिति में त्रयोदशाः सम्बन्धी कर्मकाण्ड का विविवत सम्पन्न होना आवश्यक है। इस तथाकथित कर्मकाण्ड के साथ 'नारायण बलि' का भी सम्पन्न होना आवश्यक है। यदि ऐसा नहीं होता है तो उन तथाकथित मृतात्माओं का 'पुर्नजन्म' सम्बन्धी चक्रीय क्रम प्रभावित हो सकता है।)

यति (सन्यासी) के मृतक शरीर को प्राचीन काल में भी जमीन में गाड़ा जाता था। इस सम्बन्ध में 'शुद्धिप्रकाश' (पृ0 166) ने व्याख्या उपस्थित की है कि यहां पर कुटीचक्र श्रेणी का सन्यासी है और उसने यह भी बताया है कि चार प्रकार के सन्यासी लोगों (कुटीचक्र, बहुचक्र, हंस और परमहंस) की अन्त्येष्टि किस प्रकार की जाती है।

(विशेष – प्राचीन काल और वर्तमान में भी चार प्रकार के सन्यासी लोगों (कुटीचक्र, बहुचक्र, हंस और परमहंस) में 'कुटीचक्र' को जलाया जाता है, 'बहुचक्र' को जमीन में गाड़ा जाता है, 'हंस' को जल में प्रवाहित कर दिया जाता है और 'परमहंस' को भी जमीन में गाड़ा जाता है।

'यति' के मृतक शरीर का 'अन्त्येष्टि संस्कार' सम्पन्न होने के उपरान्त उसका 'त्र्योदशाः' सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' विविधवत् सम्पन्न होना चाहिए। इन संस्कारों को उस 'यति' के अनुयायियों को समपन्न करना चाहिए। क्योंकि 'कर्मकाण्ड' सम्बन्धी संस्कारों के अभाव में वहीं 'यति' 'पुर्नजन्म' की विविध प्रक्रियायों से जुड़ पायेगा जिसे 'ब्रह्मविद्या' का समुचित ज्ञान (बौद्धिक और प्रायोगिक) होगा।)

जो स्त्रियां बच्चा जनते समय या जनने के तुरन्त बाद या मासिक धर्म की अवधि में मर जाती हैं, उसके शवदाह के विषय में विविध नियम हैं। मिताक्षरा और स्मृतिचन्द्रिका (1, पृ0 121) ने सूतिका के विषय में लिखा है कि एक पात्र में जल और पंचगव्य लेकर मन्त्रोचारण (ऋ0 10/9/1–9 'आपो हिष्ठा') करना चाहिए और उससे सूतिका को स्नान कराकर जलाना चाहिए। मासिक धर्म वाली मृत नारी को भी इसी तरह जलाना चाहिए किन्तु उसे दूसरा वस्त्र पहनाकर जलाना चाहिए (गरुापुराण – 2/4/171 और निर्णयसिन्धु – पृ0 621)।

(विषय – विविध सूतिका मृत नारी का अन्त्येष्टि संस्कार उपरोक्त क्रम में किया जा सकता है। लेकिन उसके 'त्र्योदशाः' सम्बन्धी कर्मकाण्ड के साथ 'नारायण बलि' आवश्यक है।)

उपरोक्त 'अन्त्येष्टि संस्कार' के अतिरिक्त विभिन्न कालों और विविध देशों में 'शव' का 'अन्त्येष्टि संस्कार' विभिन्न ढंगों से की जाती रही है। 'अन्त्येष्टि संस्कार' के विभिन्न प्रकार निम्न हैं –

'शव को जलाना (शवदाह), शव को भूमि में गाड़ना, शव को जल में बहा देना, शव को खुला छोड़ देना (यह सामान्यतः चील, गिद्ध, कौआ या पशु आदि का आहार बनता है। इसका प्रचलन 'पारसी' सम्प्रदाय में है।) , शव को गुफाओं में सुरक्षित रख छोड़ना या 'ममी' रूप (यथा – मिश्र) में सुरक्षित रख छोड़ना आदि।

प्रामाणिक आधार पर 'भारत' में शव को जला देना ही था। प्राचीन भारतीयों ने 'शवदाह' – जैसा कठोर हृदय वाली विधि किस प्रकार निकाली; यह बतलाना कठिन है। प्राचीन भारत में शव को भूमि में गाड़ देने की बात अज्ञात नहीं थी (अथर्ववेद – 5/30/14, 'मा नु भूमिगृहो मुक्त्' एवं 18/2/34)।

(विशेष –1: उपरोक्त क्रम में अन्तिम मन्त्र निम्न है – ' हे अग्नि; उन सभी पितरों को यहां ले आओ, जिससे कि वे हवि ग्रहण करें, उन्हें भी बुलाओ जिनके मृतक शरीर गाड़े गये थे या खुले रूप में छोड़ दिए गये थे या ऊपर (पेड़ों पर या गुफाओं में) रख दिये गये थे।

विशेष –2: शव को जलाना या भूमि में गाड़ना आदि अन्तिम संस्कार की प्रक्रिआओं में अन्तर अवश्य है। लेकिन किसी संक्रमित 'शव' को भूमि में गाड़ देना ही उचित है। क्योंकि वर्तमान 'त्र्योदशाः' सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' संक्रमित शव के उद्धार के लिए पर्याप्त नहीं है।)

पश्चिम के प्रगतिशील राष्ट्र बाइबिल के कथन की शाब्दिक व्याख्या में विश्वास करते हुए कि 'मृत' का भौतिक शरीरोत्थान होता है, केवल शव को गाड़ने की प्रथा से चिपके रहे और उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक ईसाई लोग 'शवदाह' के लिए तत्पर नहीं हुए । सन् 1906 में क्रेमेशन एक्ट (इंगलैंड में) पारित हुआ, जिसके अनुसार समतल भूमि पर 'शवदाह' करने की अनुमति प्राप्त होने लगी। लेकिन कैथोलिक चर्च वाले अब भी शवदाह नहीं करते हैं। आदिकालीन रोम के लोग 'शवदाह' को सामान्य समझते थे और शव गाड़ने की रीति केवल उन लोगों के लिए बरती जाती थी जो आत्महन्ता या हत्यारे होते थे।

ऋग्वेद के प्रणयन के पूर्व की स्थिति के विषय में कुछ भी नहीं प्रामाणिक तौर पर कहा जा सकता है। ऋग्वेद तथा सिन्धु घाटी के मोहेंजोदड़ों एवं हरप्पा अवशेषों के काल के निर्णय के विषय में अभी तक कोई सामान्य निश्चय नहीं हो सका है।

(विशेष –1: सर जान मार्शल (मोहेंजोदड़ों, जिल्द –1, ृपृ0 89) ने पूर्ण रूप से गाड़ने, आंशिक रूप से गाड़ने एवं शवदाह के उपरान्त गाड़ने के रीतियों की ओर संकेत किया है।

विशेष –2: लौरिया नन्दनगढ़ की खुदाई से कुछ ऐसी श्मशान भूमियों का पता चला है जो वैदिक काल की कहीं जाती हैं और उनमें एक छोटी स्वर्णिम वस्तु पायी गयी है जो नंगी स्त्री, सम्भवतः पृथिवी माता की हैं।

विशेष –3: उपरोक्त विवादास्पद वक्तव्यों को देखते हुए यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि – 'सनातन धर्म' में 'शवदाह' के उपरान्त 'त्र्योदशाः' सम्बन्धी जो भी 'कर्मकाण्ड' अभी उपलब्ध है वह एक सीमा तक पर्याप्त है। लेकिन 'शव' को भूमि में गाड़ने के उपरान्त का 'त्र्योदशाः' समबन्धी 'कर्मकाण्ड' वर्तमान में उपलब्ध नहीं है। इसलिए किसी 'महामारी' में मृतक के शरीर को जो भूमि में गाड़ने की प्रथा है उसका भी 'कर्मकाण्ड' विद्वतजन द्वारा लिखा जाना चाहिए।

जब तक भूमि में शव को गाड़ने की प्रथा से सम्बन्धित कर्मकाण्ड (त्र्योदशाः) उपलब्ध नहीं है तब तक पूर्व के उपलब्ध 'कर्मकाण्ड' में पिण्डों की संख्या – दुगनी/तिगुनी से लेकर सातगुना करना आवश्यक है। क्योंकि शव के ' अन्त्येष्टि संस्कार' के उपरान्त का 'त्र्योदशाः' सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' भूमि में गाड़े गये 'शव' के उद्धार के निए पर्याप्त नहीं है। इस आधे अधूरे संस्कार में 'मृतात्माएं' 'पुर्नजन्म' की अधिकांश प्रक्रियाओं से नहीं जुड़ पाती है।

विशेष –4: आरम्भिक बौद्धों में 'अन्त्येष्टि क्रिया' की कोई अलग विधि प्रचलित नहीं थी; चाहे मरने वाला 'भिक्षु' हो या उपासक।)

वर्तमान में, कसबों और गांवों में 'शवदाह' के तुरन्त बाद अस्थियां संचित कर ली जाती हैं। विष्णुधर्मसूत्र (19/11–12) और अनुशासनपर्व (26/32) का कथन है कि – संचित अस्थियां गंगा में बहा देनी चाहिए,

क्योंकि जितने दिन अस्थियां गंगा में रहेंगी, उतने सहस्र वर्ष मृत व्यक्ति स्वर्ग में रहेगा।

(विशेष– उपरोक्त व्यवस्था में प्रामाणिता का अभाव है। मृत व्यक्ति के 'अन्त्येष्टि क्रिया' के उपरान्त 'त्रयोदशाः' सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' का सम्पन्न होना आवश्यक है। क्योंकि 'पुर्नजन्म' का क्रम मात्र भावनाओं या उपदेशों से नहीं चला करता है।)

आधुनिक काल में 'शवदाह' ('अन्त्येष्टि क्रिया') के प्रथम दिन की क्रियाओं तथा अस्थि संचयन की क्रियाओं के पश्चात् मृतात्मा के लिए सामान्यतः दसवें दिन क्रियाएं आरम्भ होती है। कर्ता (शव को मुखाग्नि देने वाला) उस स्थान पर जाता है जहां प्रथम दिन के कृत्य सम्पादित हुए थे, वहां वह संकल्प करता है और पिण्ड देते समय यह कहता है – 'यह पिण्ड उस व्यक्ति के पास जाय, जिसका यह.....नाम है, यह.....गोत्र है, जिससे कि प्रेत को सताने वाली भूख एवं प्यास मिट जाये'। इसके उपरान्त वह तिल जल देता है। इसके उपरान्त वह पिण्ड को उस स्थान से हटा देता है। त्रयोदशाः सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड ' के अन्तर्गत पिण्डदान करने के उपरान्त 'कर्ता' को सभी अवशेष पिण्डों का किसी जलाशय या पवित्र नदी में विसर्जन कर देना चाहिए।

(विशेष –'शवदाह' ('अन्त्येष्टि क्रिया') के दसवें दिन कर्ता (शव को मुखाग्नि देने वाला) द्वारा पिण्ड देने का क्रम निश्चित रूप से उस 'मृतात्मा' के लिए प्रभावहीन हो सकता है। 'पुनर्जन्म' की विविध प्रक्रियाओं से उस मृतात्मा को जोड़ने के लिए कर्ता (शव को मुखाग्नि देने वाला) दस दिन तक प्रतिदिन एक –एक पिण्ड देना चाहिए। क्योंकि इस क्रम से 'मृतात्मा' का एक सूक्ष्म शरीर (अंगुष्ठमात्र, अदृश्य शरीर) बनता है जो 'पुनर्जन्म' की विविध प्रक्रियाओं से निरंतर जुड़ता टूटता रहता है। इसक्रम के उपरान्त ही उसे 'त्रयोदशाः' सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' के अन्तर्गत अन्य पिण्डों का सम्पादन करना चाहिए। यदि आवश्यक पिण्डों के देने या सम्पादन के

उपरान्त कर्ता द्वारा कुछ अतिरिक्त पिण्ड दे दिया जाय तो 'मृतातमा ' की आगामिक यात्रा सुगम और हर तरह से सुरक्षित हो सकती है।)

उपरोक्त क्रम में विविध व्यक्तियों के मृत्यु को लेकर एक आवश्यक चर्चा की गयी है। विविध मृतात्माओं के भौतिक/आध्यात्मिक उद्धार के लिए 'शवदाह' ('अन्त्येष्टि क्रिया') और उससे जुड़े त्रयोदशाः सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' का व्यापक साहित्य 'सनातन धर्म' की विविध शाखाओं /उपशाखाओं उपलब्ध है। हां, उसे समपादित/कार्यान्वित करने वाला आचार्य उसे सहीं ढंग से सम्पादित करे – यह अतिआवश्यक है। क्योंकि इसके उपरान्त ही वह मृतात्मा 'पुनर्जन्म' की विविध क्रियाओं से जुड़ने के लिए असंख्य योनियों (एक लाख चौरासी हजार योनियो से चौरासी लाख योनियों तक) में भ्रमण करने में सक्षम हो सकती है। इसके साथ – साथ एक सीमा तक यह भी सच है कि त्रयोदशाः सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' के सम्पादन में कोताही बरतने वाला आचार्य भी पातकीय श्रेणी में आ सकता है।

इसी क्रम मे हम किसी भी व्यक्ति के मृत्यु के विविध कारणो की चर्चा 'पुनर्जन्म' के सापेक्ष में करने का दुस्साहस निम्नक्रम में करने का प्रयास करेंगे –

1. व्यक्ति की सामान्य मृत्यु – यदि किसी भी व्यक्ति की मृत्यु बृद्धावस्था में 'अस्पताल' में चिकित्सा के दौरान होती है तो इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वह सामान्य मृत्यु है। सामान्य/असामान्य – दोनों सम्भावनाएं हो सकती हैं।

यदि किसी भी व्यक्ति की मृत्यु अल्पायु में होती है तो इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वह असामान्य मृत्यु है। असामान्य/सामान्य – दोनों सम्भावनाएं हो सकती हैं।

दोनों क्रम में मृतक के परिजनों को चाहिए कि वह 'अन्त्येष्टि क्रिया' के उपरान्त 'त्रयोदशाः' सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' के साथ 'नारायण बलि' या

उसके समकक्ष का प्रायश्चित करवा दे, जिससे उस 'मृतात्मा' के 'पुर्नजन्म' सम्बन्धी यात्रा में कोई अवरोध न आने पाये।

2. व्यक्ति की असामान्य मृत्यु – जो स्त्री, बच्चा या परिव्राजक है, जो दूर देश में मरता है, जो अकाल मृत्यु पाता है या आत्महत्या करता है या किसी दुर्घटना के अन्तर्गत मर जाता है; उसके लिए अन्त्येष्टि कृत्य भिन्न – भिन्न प्रकार के होते हैं। 'असामान्य मृत्यु /अकाल मृत्यु' निम्न विषम परिस्थितियों में भी हो सकती है–

2.1 युद्ध या व्यापक रक्तिम संघर्ष में जो व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त होता है उनमें अधिकांशतः 'असामान्य मृत्यु /अकाल मृत्यु' में आते हैं।

2.2 व्यापक महामारी या संक्रमण के अर्न्तगत जिन व्यक्तियों की मृत्यु होती है उनमें अधिकांशतः 'असामान्य मृत्यु /अकाल मृत्यु' में आते हैं।

2.3 कोविड –19 'विषाणु वायरस संक्रमण' के अन्तर्गत जिन –जिन व्यक्तियों की मृत्यु होती है या हुई है उनमें लगभग शतप्रतिशत मृत व्यक्ति 'असामान्य मृत्यु /अकाल मृत्यु' में आते हैं।

उपरोक्त 'असामान्य मृत्यु /अकाल मृत्यु' से सम्बन्धित मृतात्माओं के व्यापक उद्धार के लिए 'अन्त्येष्टि क्रिया' के उपरान्त 'त्रयोदशाः' सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' में आवश्यक परिवर्तन होना चाहिए।

'जन्म, मृत्यु और जन्म' के गतिशील और अगतिशील – तमाम रहस्यों से सामान्यतः त्रयोदशाः सम्बन्धी 'कर्मकाण्ड' कराने वाले आचार्य अनभिज्ञ होते हैं। अनभिज्ञता के स्थिति में 'कर्मकाण्ड' से सम्बन्धित आचार्य को चाहिए कि वह मृत व्यक्ति के मृतात्मा के समुचित उद्धार के लिए समय – समय पर आवश्यक प्रायश्चित की भी व्यवस्था करते रहे। मृतात्मा के वार्षिक श्राद्ध के पूर्व यह सब अति आवश्यक है।

व्यक्ति, चाहे किसी भी धर्म/मजहब का हो लेकिन उसके मृत्यु के उपरान्त का कर्मकाण्ड 'मृतात्मा' के लिए उसी तरह आवश्यक है – जैसे किसी अतृप्त प्यासे के लिए जल। यदि किसी धर्म/मजहब में व्यापक

या आवश्यक 'प्रायश्चित' की व्यवस्था नहीं हैं तो उससे सम्बन्धित आचार्य / कर्मकाण्डकर्ता को चाहिए कि वह अन्य धर्मों के आधार पर 'प्रायश्चित' कर सकता है। इस कार्य में धार्मिक कट्टरता या अनभिज्ञता उस तथाकथित 'मृतातमा' के लिए घातक होने के साथ – साथ अन्तिम संस्कार कराने वाले के लिए भी किसी न किसी रूप में घातक हो सकती है।

– क्रमशः

0